AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

प्राचीन भारत में पर्यावरण संरक्षण : मौर्यकाल के विशेष संदर्भ में

ORIGINAL ARTICLE

Authors
आभा भारती, प्रीति कुमारी
शोधार्थी

डॉ. अशोक कुमार मंडल
एसोसिएट प्रोफेसर
स्नातकोत्तर, इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय
हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

शोध सार

आज वर्तमान समय में पर्यावरणीय इतिहास का महत्त्व काफी बढ़ गया है क्योंकि जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण असंतुलन व प्रदूषण की समस्या केवल भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए समस्या बन गया है। भारत में अगर पर्यावरण संरक्षण की बात की जाय तो जब से मानव सभ्यता का विकास हुआ है तब से ऐसे अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं जिससे हमें पर्यावरण संरक्षण की झलक देखने को मिलती है। सिंधु घाटी सभ्यता में सिंधु निवासियों द्वारा प्रकृति की पूजा की जाती थी। इसके बाद वैदिक काल में भी नदियों, वृक्षों आदि की पूजा की जाती थी, परन्तु आधिकारिक रूप से पर्यावरण संरक्षण का प्रयास मौर्यकालीन शासकों द्वारा ही किया गया है। सर्वप्रथम चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा अपने शासन काल में वन एवं वन्यजीव संरक्षण के लिए अनेक अधिकारियों की नियुक्ति की गई। इसके साथ ही सुदर्शन झील का निर्माण करवाया गया था। इसी प्रकार सम्राट अशोक के विभिन्न शिलालेखों एवं स्तंभ लेखों से हमें पर्यावरण संरक्षण का प्रमाण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस प्रकार आज वर्तमान समय में मानव द्वारा प्रकृति का दोहन तथा पर्यावरण असंतुलन व प्रदूषण की समस्या को देखते हुए यह अति आवश्यक है कि हम प्राचीन भारत के पर्यावरणीय इतिहास को जानें तथा उससे प्रेरणा लेकर वर्तमान में सुधार करें। अतः इस शोध आलेख के माध्यम से प्राचीन भारत के पर्यावरणीय इतिहास को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द

पर्यावरण, अहिंसा, धम्म, अभयवन, सम्राट अशोक, गजतमें, हस्तिवन.

परिचय

पर्यावरण शब्द परि+आवरण दो शब्दों के योग से बना है जिसमें परि का अर्थ है ''चारो ओर'' एवं आवरण का अर्थ है ''ढके हुए''। इस प्रकार पर्यावरण का तात्पर्य उन सभी दशाओं से है जो एक प्राणी के जीवन को चारों ओर से घेरे हुए है। इस प्रकार किसी भी जीवित वस्तु के अस्तित्व पर जिन दशाओं का प्रभाव पड़ता है, उन सबको सम्मिलित रूप से पर्यावरण कहा गया है। दूसरे शब्दों में पृथ्वी के भूमध्य रेखीय प्रदेश की भीषण गर्मी से लेकर ध्रुवों के चरम शीत वातावरण में रहने वाले मानव, जीव–जंतु, पशु–पक्षी तथा कीड़े–मकोड़े सहित अनगिनत प्राणीधारी एवं उनके निवास स्थान पेड़ पौधे नदी तालाब झरना पर्वत पहाड़, पठार, घास भूमि, मैदान, शीत मरुस्थल तथा शुष्क रेगिस्तान का आपसी समन्वय और प्राकृतिक संबंधों का विस्तृत जाल पर्यावरण है। आज वर्तमान समय में पर्यावरणीय

इतिहास का महत्त्व काफी बढ़ गया है क्योंकि जलवायु परिवर्तन पर्यावरण संरक्षण असंतुलन व प्रदूषण की समस्या केवल भारत ही नहीं बल्कि वैश्विक समस्या बन गया है। हम जानते हैं कि मानव सभ्यता के आदिकाल से ही मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आखेट कृषि, खनन उद्योग, नगरीकरण, सड़क रेलवे, नाभिकीय परीक्षण तथा उर्वरक एवं रसायनों आदि का प्रयोग किया है। इन क्रियाकलापों से जहां मानव,विज्ञान के प्रयोग से विकास के पथ पर बढ़ रहा है, तो दूसरी तरफ पर्यावरण का चरम विनाश भी जारी है। आज 21 वीं सदी में जब ग्लोबल वार्मिंग, पर्यावरण संरक्षण का मुद्दा सम्पूर्ण विश्व में चर्चा का विषय बना हुआ है तब यह जरूरी है कि दुनिया के विशालतम लोकतांत्रिक देश भारत के प्राचीन काल में लोगों एवं विभिन्न शासकों द्वारा किए गए उन कार्यों, उपायों, सुझावों, नियम, कानून, विचार एवं विश्वास को जानने की जिन्होंने सदैव पर्यावरण संरक्षण का संदेश अपनी संस्कृति में समाहित किया है। भारत में प्राचीन काल से ही विभिन्न राजवंशों के शासकों तथा आम जनता द्वारा पर्यावरण संरक्षण को लेकर ऐसे अनेक कार्य किए गए हैं जो आज भी काफी प्रशंसनीय है और विभिन्न देशों के सरकारों के लिए पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रेरणा का स्रोत है।

शोध प्रविधि

इस शोध आलेख में विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। साथ ही शोध आलेखों, पुस्तकों एवं इंटरनेंट का कुशलता से प्रयोग किया गया है। वस्तुतः यह शोध आलेख द्वितीयक स्त्रोतो पर आधारित हैं।

विषय वस्तु

अगर हम प्राचीन भारत में पर्यावरण संरक्षण की बात करें तो भारतीय इतिहास में किसी भी साहित्यिक एवं पुरातात्विक स्रोतों में पर्यावरण शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, परंतु फिर भी पर्यावरण संरक्षण को लेकर विभिन्न शासकों द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे अनेक कार्य किए गए हैं जिनसे पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन होता रहा है। प्राचीन भारत में अध्यात्म और प्रकृति को एक दूसरे का पूरक माना गया है। भारतीय इतिहास में सिंधुघाटी सभ्यता, वैदिक काल, छठी शताब्दी ईसा पूर्व तथा मौर्यकाल आदि में पर्यावरण को अराध्य मानकर आराधना की जाती थी। सिंधु घाटी सभ्यता के प्रधान केंद्र मोहनजोदड़ो से प्राप्त प्रसिद्ध ''पशुपति'' मुद्रा में हाथी, गैंडा, चीता तथा भैंसा का अंकन भारत में वन्य जीवन के प्रति सम्मान का प्रथम ऐतिहासिक साक्ष्य है।[1] सिंधु निवासी प्रकृति पूजक थे। वे वृक्ष, जल, नदी, सूर्य तथा पृथ्वी की पूजा करते थे। वृक्षों में पीपल को पवित्र माना जाता था, क्योंकि उत्खनन में प्राप्त मुहरों में इसका सबसे अधिक अंकन मिलता है। पक्षी में फाख्ता को पवित्र माना जाता था। इसके अतिरिक्त नीम, खजूर, बबूल आदि का अंकन भी मुद्राओं में मिलता है।[2] वे नदियों को पोषक मानकर उनकी आराधना करते थे। पृथ्वी की पूजा उर्वरा के रूप में किया करते थे। उत्खनन में मातृ देवी की मूर्तियां भी अधिक संख्या में पाई गई है। वैदिक काल में भी पृथ्वी को मां का दर्जा दिया गया है। प्रकृति पूजा का प्रचलन वैदिक काल में भी था, लोग पीपल, बरगद, तुलसी आदि अनेक पेड़ पौधों की पूजा करते थे।[3] साथ ही अनेक पशु पक्षियों को पूजा भी की जाती थी। वर्षा,पवन अग्नि आदि प्राकृतिक देवताओं की पूजा भी किया जाता था।

इसके बाद छठी शताब्दी ईसा पूर्व में धर्म सुधार आंदोलन के परिणामस्वरूप बौद्ध एवं जैन धर्मों का उद्भव हुआ जिन्होंने धर्म के माध्यम से लोगों में अहिंसा का प्रचार प्रसार किया। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। जैन धर्म में जीव हत्या को घोर पाप माना गया है[4] और इसके लिए सामाजिक सुखों के त्याग पर विशेष बल दिया गया है। पंचशील सिद्धांतों का पहला सूत्र कहता है कि – ''पाणाति पात विरत'' अर्थात् अकारण प्राणी हिंसा न करना, अहिंसा को सर्वोपरि महत्त्व देना एवं जैन अनुयायियों के लिए प्रकृति व इसके सभी जीव जंतुओं का संरक्षण और इनके प्रति समान व्यवहार करना इस धर्म की मूल शिक्षा है। बौद्ध धर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध भी अहिंसा को सर्वोपरि मानते थे और जीव हत्या को घोर पाप मानते थे। भगवान बुद्ध का जीवन भी सदैव प्रकृति की गोद में ही बीता। उनका जन्म लुम्बिनी में साल वृक्ष के नीचे, ज्ञान प्राप्ति पीपल वृक्ष के नीचे और महापरिनिर्वाण भी कुशीनगर में प्रकृति की गोद में ही हुआ था।[5] इस प्रकार अहिंसा बौद्ध धर्म की प्रमुख विशेषता है और बौद्ध धर्म में

सदैव जीव हत्या एवं प्रकृति के दोहन को पाप माना गया है। अतः हम देखते हैं कि प्राचीन भारत में जैन तथा बौद्ध धर्म दोनों ने अहिंसा को अपना आधार बनाया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों धर्म प्रकृति के संरक्षक एवं संवर्धक थे।

प्राचीन भारत में व्यवस्थित रूप से राजनीतिक इतिहास की शुरुआत मौर्य काल से माना जाता है जो लगभग 319 ईसा पूर्व से 184 ईसा पूर्व तक था। मौर्य कालीन शासकों द्वारा भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे अनेक कार्य किए गए हैं जिनसे पर्यावरण का संरक्षण होता रहा है। सर्वप्रथम मौर्य वंश के संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा ही पूरे भारत को एक राजनीतिक सूत्र में बांधने का कार्य किया गया तथा प्रशासनिक व्यवस्था को सुव्यवस्थित किया गया। कौटिल्य के अर्थशास्त्र एवं अनेक अभिलेखों से यह प्रमाणित होता है कि चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा प्रकृति के सरंक्षण के लिए अनेक कार्य किए गए। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पर्यावरण संरक्षण के लिए राजा एवं प्रजा के कर्तव्यों का वर्णन किया गया है। अर्थशास्त्र के एक सूत्र के अनुसार – ''रक्षे पूर्व कृतनराज नवांश्वचभी प्रवर्तयेत'' अर्थात् राजा को पहले पूर्व के वनों का संरक्षण करना चाहिए इसके बाद नए वनों को रोपित करना चाहिए।[6] वनों के विकास हेतु एक प्रकार के वन सोपान का निर्देश दिया गया, जिसमें गांवों तथा जनपदों की सीमाओं पर क्रमशः लघुवनो, चारागाहों, सोमारण्य तथा तपोवन, विहारवन, हस्तीवन आदि के विकास की परिकल्पना की गई। ये सभी प्रकार के वन, वन्य जीवों के निवास व संवर्धन के केंद्र थे।

मौर्य काल में ऐसे अनेक अधिकारियों की नियुक्ति भी की गई थी जिनका कार्य वनों का संरक्षण करना था। इनमें आटविक एक प्रमुख अधिकारी होता था जो वन विभाग का प्रमुख अधिकारी होता था। इसके अतिरिक्त कुप्याध्यक्ष की नियुक्ति भी की गई थी, जिसका कार्य वनों का संरक्षण एवं वनों से होने वाली आय को राजकोष में जमा करना था। इसकी सहायता के लिए वनपाल, नगवनाध्यक्ष, वृक्षमर्मज्ञ, वन चरक जैसे कर्मचारी नियुक्त किए जाते थे। इसके अतिरिक्त वन उत्पादों की तस्करी एवं वन्य जीवों के अवैध शिकार को रोकने के लिए विविताध्यक्ष (चारागाह विभाग का अध्यक्ष) तथा सूनाध्यक्ष (राजकीय पशुवधशाला का अध्यक्ष) की नियुक्ति भी की गई थी।[7] वन विभाग के कर्मचारियों एवं अधिकारियों के भ्रष्टाचार को रोकने के लिए गुप्तचर भी नियुक्त किए जाते थे। इस प्रकार मौर्य कालीन शासकों का भारतीय वनों, उनके निवासियों और सामान्य रूप से भारतीय जीवों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण था। मौर्य काल में हाथियों को सबसे महत्वपूर्ण वन उत्पाद माना जाता था, क्योंकि उस समय सैन्य शक्ति न केवल पैदल सैनिकों और घोड़ों पर निर्भर था, बल्कि हाथियों का भी महत्वपूर्ण स्थान था। चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा पंजाब में सिकंदर के गवर्नर सैल्युकस को हराने के लिए युद्ध में हाथियों का भी प्रयोग किया था। मौर्य काल में हाथियों के सरंक्षण के लिए हाथी वनों के रक्षक जैसे अधिकारियों की नियुक्ति भी किया गया था, जिसका वर्णन कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी स्पष्ट रूप से किया गया है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार मौर्यकाल में 5 प्रकार के अभयवन होते थे जिनमें किसी भी जीव–जंतु का शिकार करना एवं पेड़ पौधों को नुकसान पहुंचाना वर्जित था।[8] इनमें मृग, गैंडा, भैंसा, मोर आदि पशु–पक्षी शामिल थे। इन्ही अभयवनों की अवधारणा पर वर्तमान वन्य जीव अभयारण्य है। अर्थशास्त्र के अनुसार कुछ अन्य पशुओं तथा पक्षियों का संरक्षण इस सिद्धांत पर किया जाता था कि उनको मारना प्रचलित प्रथा के प्रतिकूल था। ऐसे अनेक पशु–पक्षियों की लंबी सूची दी गई है जिन्हें मारना निषिद्ध था। इस सूची में समुद्र में पैदा होने वाले जीव जंतु, हाथी, घोड़े, बैल, गधा, मत्स्य, सारस, हंस, कौआ, मोर, तोता, मैना, बुलबुल, तीतर, बटेर आदि सम्मिलित थे।[9] इसके साथ ही उन सभी प्राणियों का संरक्षण किया जाता था जिन्हें शुभ (मंगलायाः) माना जाता था।

मौर्य काल में विशेष रूप से सम्राट अशोक के शासन काल 269– 232 ईसा पूर्व में ऐसे अनेक जनकल्याणकारी कार्य किए गए जिनसे पर्यावरण का संरक्षण भी होता था। भारत के लिखित इतिहास में पर्यावरण संरक्षण का कार्य सर्वप्रथम अगर किसी शासक द्वारा किया गया था तो वह सम्राट अशोक द्वारा ही किया गया था। प्रकृति के महत्व को स्वीकारते हुए सम्राट अशोक ने वन एवं वन्य– जीव जंतुओं के संरक्षण एवं संवर्धन पर विशेष बल दिया जिसका प्रमाण सम्राट अशोक के विभिन्न अभिलेखों से मिलता है। कलिंग युद्ध के बाद सम्राट अशोक बौद्ध धर्म का उपासक

बन गया और उसने अहिंसा का मार्ग अपनाया जो बौद्ध धर्म की प्रमुख विशेषता थी। उसने अहिंसा पर आधारित धम्म की घोषणा की जिसमें जीव हत्या को पाप माना गया है। सम्राट अशोक द्वारा धम्म को लोकप्रिय बनाने एवं मानव तथा पशु जाति के कल्याण के लिए अनेक कार्य किए गए। सर्वप्रथम पशु–पक्षियों की हत्या पर रोक लगा दिया गया, इसके बाद मानव तथा पशुओ के लिए अस्पताल भी बनवाया गया तथा जो औषधियां प्राप्त नहीं थी उन्हें बाहर से लाकर विभिन्न स्थानों में आरोपित किया गया। सातवें स्तंभ लेख में वह हमें बताता है कि – मार्गों में मेरे द्वारा वट वृक्ष लगाए गए। वे पशु एवं मनुष्य को छाया प्रदान करेंगे। आम्र वाटिकाएं लगाई गई। आधे–आधे कोश की दूरी पर कुएं खुदवाए गए तथा विश्राम गृह बनवाए गए। मनुष्य तथा पशु उपयोग के लिए प्याऊ चलाए गए . ..... मैंने यह इसलिए किया है कि लोग धम्म का आचरण करें।[10]

इसी प्रकार दूसरे स्तंभ लेख के अनुसार – देवनंप्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, धम्म श्रेष्ठ है। पर धम्म क्या है? पापों का अभाव, अच्छा काम, दया, दान, सत्य, पवित्रता। मैंने कई प्रकार से चक्षु दान (ज्ञान दृष्टि) किया है। दोपायो, चौपायों, पक्षियों तथा जलचरों पर अनेक प्रकार के उपकार मेरे द्वारा किए गए। यहां तक कि उन्हें जीवनदान भी दिया गया।[11] इसी तरह से पांचवे स्तंभ लेख के अनुसार– देवनंप्रिय प्रियदर्शी कहता है कि अपने अभिषेक के छब्बीस वर्ष बाद मैंने निम्नलिखित जीवों का वध निषिद्ध किया – शुक, सारिका, अरुण, चकवाक, हंस, नंदीमुख, गेलाट, जातुका, अंबाक पीलिका, कच्छपी, अस्थि हीन मत्स्य, वेद वेयक, गंगा पपूटक, संकुजमछ, कछुआ और साही खरगोश जैसी गिलहरी, बारहसिंगे, सांड, घर के कीट, गैंडा, श्वेत कपोत और ऐसे सभी चौपाए जो खाए न जाते हो और अन्य किसी काम न आते हो। गर्भिणी अथवा स्तनधारी शिशुवाली भेड़, बकरी और सुकरी तथा उनके छः माह के छोटे बच्चे, मुर्गों को बधिया न किया जाए। जिस भूसे में कीड़े पड़ गए हो उसे न जलाया जाय। व्यर्थ या जीव–जंतुओं को मारने के लिए वन न जलाए जाय। एक जीव को दूसरे जीव को न खिलाया जाय। तीनों ऋतुओं की पूर्णिमा और तैष की पूर्णिमा के दिन आस–पास मछली न मारी जाय और न बेची जाय, अर्थात् पखवारे के चौदहवें और अगले पखवारे के पहले दिन और उपवासों के दिन। इन दिनों में नाग वन या मीनाश्यों में अन्य जीव भी न मारे जाय। प्रत्येक पक्ष के आठवें, चौदहवें और पंद्रहवें दिन तिष्य और पुनर्वसु के दिन, तीनों ऋतुओं की पूर्णिमा को तथा दूसरे त्योहारों पर बैलों, मेढ़ों, सुअरों तथा अन्य जानवरों को बधिया न किया जाए। तिष्य, पुनर्वसु और ऋतुओं की पूर्णिमा को प्रत्येक ऋतु की पूर्णिमा वाले पक्ष में घोड़ों और बैलों को न दागा जाय।[12] इस तरह हम देखते हैं कि सम्राट अशोक के सात लेखों के स्तंभ लेख को छः भिन्न–भिन्न स्थानों में पाषाण स्तंभों पर उत्तीर्ण पाए गए हैं। उन स्तंभ लेखों के दूसरे, पांचवे एवं सातवें लेखों में सम्राट अशोक द्वारा किए गए ऐसे अनेक कार्यों का लिखित प्रमाण मिलता है जिसमें पर्यावरण का संरक्षण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

इसी प्रकार सम्राट अशोक के वृहद शिलालेख जो आठ भिन्न–भिन्न स्थानों से प्राप्त हुए हैं और जिनमें चौदह लेख उत्तीर्ण है उनसे भी पर्यावरण संरक्षण के लिए किए गए कार्यों की झलक मिलती है। इनमें वृहद शिलालेख के प्रथम लेख में कहा गया है कि – यह धम्म लिपि देवताओं के प्रिय, प्रियदर्शी राजा द्वारा लिखवाई गई। यहां कोई जीव मारकर बलिदान न किया जाए, न कोई समाज किया जाय क्योंकि देवताओं का प्रिय राजा समाज को बुरा मानता है। परन्तु कुछ ऐसे समाज है जिन्हें देवताओं का प्रिय राजा अच्छा मानता है। पूर्व में देवताओं के प्रिय राजा प्रियदर्शी की पाक शाला के लिए सहस्त्रों जीवों का वध किया जाता था, पर अब जब यह धम्म लिपि लिखवाई गई, पाक शाला के लिए मात्र तीन जीव मारे जाते थे – दो मोर तथा एक हरिण। पर अब हरिण भी प्रतिदिन नहीं मारा जाता था। इन तीनों जीवों की भी भविष्य में हत्या नहीं की जायेगी।[13]

इसी प्रकार बृहद शिलालेख के दूसरे लेख में कहा गया है कि – देवताओं के प्रिय राजा प्रियदर्शी के राज्य में सब स्थानों पर तथा उसके सीमांत राजाओं जैसे चोल, पाण्डेय, सतियपुत, केरलपुत्त तथा ताम्रपर्णी, यवन राजा अनियोक और उसके पड़ोसियों के राज्यों में भी सब स्थानों पर देवताओं के प्रिय ने दो प्रकार की चिकित्सा का प्रबंध किया है मानव चिकित्सा और पशु चिकित्सा। मनुष्यों तथा पशुओं के लिए उपयोगी औषधियां, जहां नहीं है वहां मंगाकर लगवाई गई है, जहां जहां फल और मूल नहीं होते थे वहां उन्हें भी मंगाकर लगवाया गया है। मार्गों में मनुष्यों और पशुओं के उपयोग के लिए कुएं खुदवाए गए तथा वृक्ष लगवाए गए हैं।[14]

इसी तरह ग्यारहवें लेख में भी कहा गया है कि – ऐसा कोई दान नहीं है जैसा धम्म दान, ऐसी कोई मित्रता नहीं जैसी धम्म के साथ मित्रता, ऐसा कोई संबंध नहीं है जैसा धम्म के साथ संबंध। धम्म यह है कि दासों और सेवकों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाए, माता–पिता की अच्छी सेवा की जाय, मित्रों,परिचितों संबंधियों, ब्राह्मणों और श्रमणों को दान दिया जाय, जीवों की हिंसा न की जाय।[15] ऐसा करने से मनुष्य को इस लोक में भी सुख मिलता है और इससे परलोक में भी बहुत पुण्य मिलता है। इस प्रकार चौदह लेखों के बृहद शिलालेखो में भी सम्राट अशोक द्वारा करवाए गए ऐसे अनेक कार्यों का वर्णन मिलता है, जिससे हमें पर्यावरण संरक्षण के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। मौर्य कालीन कलाकृतियों में भी प्रकृतिक वातावरण का भाव प्रकट होता है। मार्शल के अनुसार –– सिंह स्तंभ में शिल्पी ने सिंहो की फूली नसों एवं मांसपेशियों में तनाव उकेरकर जिस प्राकृतिक स्वरूप को अपना लक्ष्य बनाया है, इससे स्पष्ट होता है कि उन्होंने प्राकृति के द्वारा ही ये संवेदनाएं अर्जित की है।[16] सम्राट अशोक के स्तंभों पर सिंह, वृषभ, गज, अश्व पशुओं और पद्म (कमल) का अंकन प्रतीकात्मक रूप से भगवान बुद्ध के जीवन की घटनाओं की अभिव्यक्ति से संबंधित है, किंतु प्रत्यक्ष रूप में यह प्रकृति और पर्यावरण का भी अनूठा उदाहरण है, जिसके माध्यम से आमजन भी उनके महत्त्व को समझ सके।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अध्ययन के पश्चात् हम यह कह सकते हैं कि भारत में प्राचीन काल से ही पर्यावरण को अध्यात्म से जोड़कर सदैव उसका सरंक्षण किया गया है। लेकिन भारत के लिखित इतिहास में पर्यावरण संरक्षण का कार्य आधिकारिक रूप से अगर किसी शासक के द्वारा किया गया था तो वह सर्वप्रथम ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में चक्रवर्ती सम्राट अशोक द्वारा किया गया था। प्रकृति के महत्व को स्वीकारते हुए सम्राट अशोक ने वन एवं वन्य जीव–जंतुओं के संरक्षण के लिए विशेष रूप से कार्य किया था, जिसका प्रमाण आज भी सम्राट अशोक के विभिन्न अभिलेखों में सुरक्षित है। इस प्रकार मौर्यकालीन शासकों द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिए ऐसे अनेक कार्य किए गए जो आज भी काफी प्रसांगिक है, जैसे वर्तमान वन्य जीव अभयारण्य की अवधारणा मौर्यकालीन अभयवनों से ही लिया गया है। इसी प्रकार 1992 में भारत सरकार द्वारा हाथियों के सरंक्षण हेतु परियोजना ''गजतमे'' प्रारम्भ किया गया था। यह ''गजतमें ''17 शब्द प्राकृत पाली भाषा का शब्द है जो सम्राट अशोक के कालसी शिलालेख से लिया गया है।

आज वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण पूरे विश्व के लिए एक चुनौती है। इसके लिए वैश्विक स्तर पर अनेक सम्मेलन जैसे पृथ्वी सम्मेलन, मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल तथा प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है, लेकिन फिर भी पर्यावरण प्रदूषण की समस्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है, जो विश्व के सभी देशों के लिए चिंतनीय विषय है। अतः आज पूरे विश्व के सभी देशों के लिए यह आवश्यक है कि वे प्राचीन भारत के पर्यावरणीय इतिहास को जाने और विभिन्न शासकों द्वारा पर्यावरण संरक्षण हेतु किए गए कार्यों से प्रेरणा लें ताकि समय रहते उचित निर्णय लिया जा सके अन्यथा इसका परिणाम काफी भयावह हो सकता है, जो पूरे विश्व के लिए संकट का कारण बन सकता है।

संदर्भ सूची

1. सिंह भगवान, हड़प्पा सभ्यता और वैदिक साहित्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ . सं 233 –34
2. श्रीवास्तव के सी, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2019–20, पृ सं 61
3. सिंह फुलेश्वर, प्राचीन भारत का इतिहास, आलोक भारती प्रकाशन, पटना, 2010, पृ सं 99
4. शर्मा राम शरण (अनु देवशंकर नवीन, धर्मराज कुमार), भारत का प्राचीन इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2021, पृ सं 128
5. वही, पृ सं 130

6. प्रसाद मणिशंकर, कौटिल्य के राजनीतिक एवं सामाजिक विचार, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन,नई दिल्ली, 1998, पृ सं 25
7. पूर्वोक्त, श्रीवास्तव के सी, पृ सं 256
8. झा द्विजेन्द्र नारायण, श्रीमाली कृष्ण मोहन, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविधालय, 2018, पृ सं 203
9. पूर्वोक्त, प्रसाद मणिशंकर, पृ सं 133
10. मुखर्जी राधा कुमुद, अशोक, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली, चतुर्थ पुनर्मुद्रण, 2015 पृ सं 51
11. पूर्वोक्त, श्रीवास्तव के सी, पृ सं 242
12. वही, पृ सं 243
13. पूर्वोक्त, मुखर्जी राधा कुमुद, पृ सं 108
14. वही, पृ सं 111
15. वही पृ सं 132–33
16. सिन्हा बिपिन बिहारी, प्राचीन भारत का इतिहास, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014 पृ सं 182
17. पूर्वोक्त, मुखर्जी राधा कुमुद, पृ सं 51

––==00==––